International Journal of Applied Research 2019; 5(1): 121-131

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(1): 121-131
www.allresearchjournal.com
Received: 29-11-2018
Accepted: 30-12-2018

डॉ. महासिंह पूनिया
हिन्दी विभागाध्यक्ष,
इंस्टीट्यूट ऑफ इन्टीग्रेटिड एण्ड ऑनर्स स्टड़ीज, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र,
हरियाणा, भारत

Correspondence
डॉ. महासिंह पूनिया
हिन्दी विभागाध्यक्ष,
इंस्टीट्यूट ऑफ इन्टीग्रेटिड एण्ड ऑनर्स स्टड़ीज, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र,
हरियाणा, भारत

हरियाणवी लोरियों में सांस्कृतिक मूल्य: एक अवलोकन

डॉ. महासिंह पूनिया

प्रस्तावना

'लोरी' लोकजीवन में बच्चों को सुलाने के लिए गाया जाने वाला बालगीत है। बच्चों को सुलाने या रिझाने के लिए गाई जाने वाली जकड़ी लोरी कहलाती है। लोरी लोक सांस्कृतिक दृष्टि से बालमन के अनुसार लोकांचल द्वारा गढ़ी गई वह तुकान्त कविता है जिसमें आंचलिकता की खुशबू समाहित है।[1] पुष्पों के से शिशु कभी प्रताप और शिवा बनने के लिए तो, कभी कबीर और तुलसी बनने के लिए मां की गोद में आते हैं। मां के हृदय की सोई हुई कला को जगाते हैं। मां की गोद कला ही सगाी पाठशाला है, जहां केवल हृदय का भी आधिपत्य होता है। जन्म से पूर्व ही मां के स्तनों में दूध की और हृदय में वात्सल्य रस की सृष्टि होती है। इस रस से ओत-प्रोत होकर मां का हृदय गीत गाता है। ये गीत सर्व-साधारण की वाणी में लोरियों के नाम से विख्यात है। शिशु दूध पीता जाता है और लोरियां भी सुनता जाता है। संसार के ग्रामीण साहित्य मे लोरियां अपना विशेष स्थान रखती हैं। बच्चों को सुलाते समय गाए जाने का गीत ही साहित्यिक दृष्टि से लोरी है।[2] समाज में सभ्य तथा असभ्य सभी जातियों की माताएं लोरियां गा गाकर आनन्द प्राप्त करती हैं। वे यह नहीं देखती कि उनकी आवाज़ सुरीली है या नहीं, उन्हें तो अपने शिशुओं को रिझाने से मतलब रहता है। झूला, पालणा हिलाती हुई या शिशु की पीठ पर थपकियां देती हुई जब वे लोरियां गाती हैं, तो उनकी रूखी तथा खुरदरी वाणी में भी अलौकिक मिठास आ जाती है। शिशु मात्र मां की धरोहर ही नहीं है, वह पुत्र ही नहीं भानजा, अपितु अन्य नातेदारों का दौहित्रा भतीजा, बेटा, पोत्र आदि का भी स्वरूप है। उसके जन्म के साथ सब की आशाएं बंधी हैं, ये आशाएं लोरी के माध्यम से भासमान हो उठती हैं। जिस समय शिशु को गोद में लेकर दुलारते-पुचकारते व्यक्तिगत लघु गीत गाए जाते हैं, तो वे लोरी का रूप धारण कर लेते हैं। स्पष्ट तथा सरल भाषा में सूत्ररूप से गई लोरियां किसी भी देश तथा जाति के साहित्य को आभा एवं

महिमा को चार चांद लगा सकती है। देश तथा काल के क्रम से इनकी भाषा बदलती रहती है, लेकिन भाव वही रहते हैं। कौशल्या ने राम के लिए जो लोरियां गाई थी, वो आज भी अयोध्या की माताओं को भूली नहीं है। हां भाषा संस्कृत के स्थान पर हिन्दी हो गई है, पर भाव वही पुराने हैं। लोकसांस्कृतिक दृष्टि से हरियाणा अत्यंत समृद्ध प्रदेश है, जहां जिस प्रकार हरियाणवीं लोकगीतों, लोक-कथाओं, लोकगाथाओं, कहानियों, लोकोक्तियों, मुहावरों एवं बालगीतों की भरमार मिलती है। उसी प्रकार हरियाणवीं लोरियां भी कदम-कदम पर बिखरी हुई पड़ी है। आवश्यकता है उनको संकलन कर लोकसांस्कृतिक विधा को बचाए रखने की। यह शोध-पत्र इसी दिशा में महज एक पहल है।

संस्कृति किसी समाज में गहराई तक व्याप्त गुणों के समग्र रूप का नाम है, जो उस समाज के सोचने, विचारने, कार्य करने, खाने-पीने, बोलने, नृत्य, गायन, साहित्य, कला, वास्तु आदि में परिलक्षित होती है। संस्कृति का वर्तमान रूप किसी समाज के दीर्घ काल तक अपनायी गयी पद्धतियों का परिणाम होता है। [3] 'संस्कृति' शब्द संस्कृत भाषा की धातु 'कृ' (करना) से बना है। इस धातु से तीन शब्द बनते हैं 'प्रकृति' (मूल स्थिति), 'संस्कृति' (परिष्कृत स्थिति) और 'विकृति' (अवनति स्थिति)। जब 'प्रकृत' या कच्चा माल परिष्कृत किया जाता है तो यह संस्कृत हो जाता है और जब यह बिगड़ जाता है तो 'विकृत' हो जाता है। अंग्रेजी में संस्कृति के लिये 'कल्चर' शब्द प्रयोग किया जाता है जो लैटिन भाषा के 'कल्ट या कल्टस' से लिया गया है, जिसका अर्थ है जोतना, विकसित करना या परिष्कृत करना और पूजा करना। संक्षेप में, किसी वस्तु को यहाँ तक संस्कारित और परिष्कृत करना कि इसका अंतिम उत्पाद हमारी प्रशंसा और सम्मान प्राप्त कर सके। यह ठीक उसी तरह है जैसे संस्कृत भाषा का शब्द 'संस्कृति' । [4]

सांस्कृतिक दृष्टि से लोरियों का अपना महत्व है। लोरियां जहां एक ओर लोकजीवन के संस्कारों, मान्यताओं, परम्पराओं एवं संस्कृति को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संवाहित करने का कार्य करती हैं, वहीं पर लोकजीवन की सम्पूर्ण झांकी भी प्रस्तुत करती है। लोरियां केवल महिलाओं के लिए नहीं, अपितु पुरुषों के लिए भी होती है। यह माना कि मां, बूआ, मौसी, चाची, ताई, काकी, नानी, दादी आदि सभी लोरियों के माध्यम से अपने परम्परागत संस्कारों को आगे बढ़ाने में निर्णायक भूमिका अदा करती है। इसके साथ-साथ पुरुषों में पिता, काका, ताऊ, भाई, नाना, दादा आदि सभी भी लोरियों के माध्यम से अपने वंशजों का दिल बहलाकर अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति को लोरियों के माध्यम से अंजाम तक पहुंचाने का कार्य करते हैं। लोरियां शिशु की आयु के अनुसार ही प्रस्तुत की जाती है। जब शिशु कम उम्र का होता है, तो उसके लिए आ आ आ आ..... ऊं ऊं ऊं ऊं ऊं जैसे शब्दों का प्रयोग अधिक किया जाता है। जैसे ही शिशु बड़ा होता है, उसके लिए -अटकन बटकन दही चटाकन, बाबा लाए सात कटोरी, एक कटोरी फूटी, मामा की बहू रूठी।

जैसी लोरियों का प्रयोग भी किया जाने लगता है। यहां पर मां लोरी के माध्यम से जहां अटकन बटकन व चटाकन शब्दों के माध्यम से बच्चों को अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास करती है, वहीं पर दूसरी ओर बच्चों की मामी किस बात पर रूष्ठ होती है, उसकी ओर भी इंगीत करती है। इतना ही नहीं, इस लोरी के पश्चात् शिशु का हाथ पकड़कर उसे गुदगुदी करते हुए उसमें पारिवारिक एवं लोकसंस्कारों की घूटी पिलाई जाती है।

हरियाणवीं परिवेश में जैसे ही शिशु बड़ा होता है, उसकी तुलना कृष्ण से की जाने लगती है, क्योंकि हरियाणवीं समाज में कृष्ण एवं गाय का परस्पर

गहर सम्बन्ध है। गाय को माता भी कहा जाता है। परिवार में रोटी बनाते समय सबसे पहले रोटी गाय के लिए निकाली जाती है, क्योंकि उसको देवता की कोटि में माना जाता है। यहां पर जो लोरी दी जा रही है। इसमें गाय का हरियाणवीं लोकजीवन में गाय का क्या स्थान है, उसकी महत्ता को दर्शाया गया है। उसके गुम होने पर गांवों में कैसे गवाही दी जाती है। इसकी बानगी भी यहां पर दी गई है। इस बानगी के साथ ही बच्चे की बाजू पर चलते हुए मां उसकी बगल तक पहुंच जाती है और उसे हंसने के लिए बाध्य करती है। देखिए यह उदाहरण - आट्टे-बाट्टे, दही चट्टाके। गौरी गाय, बलैया सा बाच्छा। न्याणा तुड़ागी, धावड़ी झुड़ागी। किसे नै देखी हो तो बता दियो...ओ...ओ... चौधररियों। इसी प्रकार एक अन्य उदाहरण देखिये - आट्टे-बाट्टे दही चट्टाके, म्हारी भूरी म्हैंस खूगीं रै चौधररियों,

या पैंड़, या पैंड़, या पैंड़.....
या पागी, या पागी, या पागी हा हा हा.....(हंसी) [5]

लोरी केवल मां ही नहीं, अपितु दादी, नानी, बूआ-मौसी भी गाती हैं। शिशु की मां जब पानी लेने के लिए बाहर जाती है, तो पीछे से उसकी बूआ बच्चों को खिलाते हुए कहती है कि तुम पिलंग पर सो जाओ तुम्हारी मां पानी लेने के लिए गई हुई है और वह आते हुए गूड़ की धाणी लेकर आएगी। इसके साथ बूआ मां की चटोरी मनोवृत्ति का उजागर करते हुए कहती है कि वह गूड़ को स्वयं ही खा जाएगी न तुझे देगी न मुझे। इसलिए तू जल्दी से सो जा। उदाहरण -

सोज्या बेटा सोज्या,
लाल पिंलग पै सोज्या।
तेरी मां गई सै पाणी नै,
ल्यावैगी गुड़ धाणी।
तन्नैं दे नैं, मन्नैं दे,
आपै-आप गुटकाले गी,
सोज्या कालू सोज्या। [6]

इसी प्रकार बच्चों के जीवन को लेकर भावी परिकल्पना करते हुए, कुछ इस तरह की लोरी भी गाई जाती हैं, जिनमें सास बहू का जिक्र होता है, इसलिए इसी तरह का गीत शादी के अवसर पर जब दूल्हा बहू लेकर घर में प्रवेश करता है। यहां पर सासू एवं बहू में परस्पर तुलना की गई है। पानी लेने के लिए बहू को जाना चाहिए, जबकि बहू सासू को भेजती है, क्योंकि उसकी नीयत पीछे से बिंदोले खाने की होती है। उदाहरण -

गैर गड़ी भाई गैर गड़ी,
सासू छोटी, बहू बड़ी,
सासू जब-जब पाणी नै जा,
बहुअड़ इतणै बिन्दौला खां। [7]

लोरियों में आंचलिकता का बोलबाला भी देखने को मिलता है। क्षेत्र विशेष में होने वाली ऐतिहासिक घटनाओं को भी लोरियों में स्थान दिया गया है। इसी तरह की ऐतिहासिक घटना गूड़ाण एवं झोझू गांव के विषय में दर्शाई गई है, जिसमें गूड़ाण गांव की टापरी के टूटने का ब्यौरा दिया गया है, वहीं पर झोझू में मोरों के बोलने की ओर संकेत किया गया है। उदाहरण -

लोरी-लोरी लापरी,
गुड़ाणै टूटी टापरी,
झोझू बोल्या मोरड़ा,
तेरी मां नै लेग्या चोरड़ा। [8]

अधिकत्तर लोरियों में हास्यात्मक अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। इस अभिव्यक्ति के माध्यम

से जहां एक और लोकजीवन की यथार्थ झांकी देखने को मिलती है, वहीं पर परिकल्पनाओं के माध्यम से शिशु के भावी जीवन का भी समावेश दिखाई पड़ता है -

ओड बात, गधे नै मारी लात,
गधा कह मेरै पूंछ कोन्या,
मुन्ना कह मेरै मूंछ कोन्या। [9]

राजस्थान से सटे हुए हिस्से अहीरवाल में आज भी राजस्थानी बोली का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। यही कारण है कि यहां की जीवनशैली पर काफी प्रभाव साथ लगती राजस्थानी संस्कृति का देखने को मिलता है। नीचे दी गई लोरी के माध्यम से मां जहां एक ओर अहीरवाल के काम-धंधे की ओर संकेत करती है, वहीं पर दूसरी ओर शिशु के मामा के मोटे होने का मज़ाक भी उड़ाती है और उसके पेट की तुलना बकरी के पेट से करती हुई तथा उसे पैरे पर झुलाती हुई अपनी मनोभावनाओं को इस लोरी के माध्यम से कुछ यूं प्रस्तुत करती है -

झोजो झोठो, मामू मोटो,
मामा की बकरी, लौंग चरै थी,
चरते-चरते डालो टूटयों,
मामा की बकरी को पेट फूट्यों। [1०]

हरियाणवीं लोकजीवन में चंदामामा का विशेष महत्व है। जिस प्रकार अनेकों लोककथाएं एवं कहानियों में चंदामामा के माध्यम से बगाों को शिक्षा देने का प्रयास किया जाता है, उसी प्रकार हरियाणवीं लोरियों में भी चंदामामा के माध्यम से परिकल्पना की जाती है कि हे चंदा मामा! अपनी सुनहरी चांदनी इसी तरह से बिखेरते रहो और किसानी जीवन को गेहूं और चने में बरकत होती रहे, ताकि मांडी बनाकर पशुधन को भी स्वस्थ रखा जा सके। इस लोरी में मां बच्चों को हरियाणवीं लोकजीवन में चंदामामा की क्या महत्ता है और उसका खेती तथा पशु धन पर क्या प्रभाव पड़ता है, को दर्शाती हुई कहती है -

चंदा मामा, चांदी दे,
गेहूं चण्यां की मांडी दे। [11]

शिशु के अंग प्रत्यंगों को भी लोरी का विषय बनाया जाता है। छोटे बच्चों की आंखों में काजल डाला जाता है। माथे पर बिंदिया लगाई जाती है। पांच में पाजैब डाली जाती है। सिर पर टोपला रखा जाता है, ऐसा सब कुछ करने के पश्चात् बगाा कैसा लगता है तथा इसके साथ ही वह दादी, ताई तथा परिवार के अन्य सदस्यों की गोद में खेलता है। इस लोरी में मां अपनी मनोभावनाओं को कुछ इस तरीके से प्रस्तुत किया गया है -

आ जा री निंदिया, आ जा री निंदिया,
आंखों में काजल, माथे पे बिंदिया।

पायां मैं पैंजणियां लागा, छुन्नक-छुन्नक डोगैगा,
हरी जरी की टोपली, बजार सूई डोगैगा,
दादा कह कै बोगेगा, दादी की गोदी खेगैगा।
पायां मैं पैंजणियां लागा, छुन्नक छुन्नक डोगैगा।
ताऊ कहकै बोगैगा, ताई की गोद्दी खेगैगा।
पायां मैं पैंजणियां लागा, छुन्नक छुन्नक डोगैगा।[12]

हरियाणवीं लोकजीवन में कृषि एवं पशु आधार ही लोकजीवन का केन्द्र बिन्दु है। ऐसे में दूध घी की मौज मस्ती हरियाणवीं लोकजीवन का प्रतिनिधित्व करती है। इसी मौज मस्ती को इस लोरी के माध्यम से समेट कर कैसे परिकल्पना की है, देखिये यह उदाहरण -

लाला लाला लोरी, दूध-भरी कटोरी,
लाला की मां पाणी नै जा, लाला दूध मलाई खा,
लाला रे ललणिया रे बारह गज का तणिया रे,
चंदा मामा आवैगा दूध मलाई लावैगा,
लाला नै खिलावैगा। [13]

हरियाणवीं लोकजीवन में शिशुओं के उल्टे-सीधे नाम रखने की परम्परा है। इसके पीछे मान्यता है कि बगो का जीवन सुरक्षित रहता है और उसे किसी की नज़र भी नहीं लगती। यहां पर शिशु को अनेक नामों जैसे मुन्ना, लाल, लगा, कालू, धोल़ा आदि की संज्ञा दी जाती है। इन्हीं संज्ञाओं के आधार पर हरियाणवीं लोकजीवन में अनेकों लोरियां आम जन को कण्ठित है। देखिये उदाहरण-

लगा लगा लोरी,
दूध भरी कटोरी,
दूध में पताशा,
लाला करे तमाशा।
लाला की मां पानी जा,
लाला दूध मलाई खा।
कटोरी गई टूट,
लाला गया रूठ। [14]

हरियाणवीं समाज में शिशु के बाल रूप की तुलना कृष्ण के साथ-साथ राम से भी की जाती है, जिस प्रकार कृष्ण के बाल घुंघराले थे, उसी प्रकार एक मां अपने बगो के घुंघराले बालों को देखकर सहज ही कह उठती है -

घुंघराले बाल मेरे ललना के,
ताऊ भी हर्षाया, दादा भी हर्षाया,
हर्षाया सब परिवार। मेरे ललना का.....
ललना रे, ललणियां रे,
बारह गज का तणियां रे,
चन्दा मामा आवैगा,
दूध मलाई लावैगा,
ललण को खिलावैगा। [15]

हरियाणा में किसानी संस्कृति का बोलबाला देखने को मिलता है। इसी संस्कृति के अनेकों ऐसे अनछुए पहलु हैं, जिनको लोरियों के माध्यम से भी प्रस्तुत किया गया है। किसानी संस्कृति में घी-दूध की मौज रहती है क्योंकि किसान लोग खेती के साथ पशु-धन को भी अपने जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा मानते हैं। आज भी किसानों के घर में गाय एवं भैंसों की भरमार होती है। यही कारण है कि उनके खान-पान में दूध-दही की बहुलता देखने को मिलती है। हरियाणवीं लोकजीवन में इन घरों की महिलायें पहर के तड़के उठकर दूध बिलोया करती हैं। ऐसे में बच्चा उठकर दूध की मांग करता है और कोई तीसरा व्यक्ति मां के बच्चों के रोने की बात कहता है, तो सम्भवत: तब इस लोरी ने जन्म लिया और जो आज भी गांव-गांव प्रचलित है -

झगड़-झगड़ दूध बिलावै,
जाटणी तेरा बेटा रोवै।
रोवै सै तो रोवण दे,
मन्नैं दूध बिलोवण दे। [16]

इसी प्रकार यह लोरी देखिए, जिसमें हरियाणवीं लोकजीवन की खान-पान की विशेषताओं एवं प्राथमिकताओं को कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किया गया है -

चन्दा मामा दूर के,
पुए पकाए बूर के,
आप खाए थाली में,

मुन्नैं के दे प्याली में,
प्याली गई टूट,
मुन्न गया रूठ....।
नई थाली लाएंगे,
मुन्नै को मनाएंगे। [17]

पालणा हरियाणवीं लोकजीवन का वह अंश है, जिसमें बच्चा पलता है। गांव में आज भी यह परम्परा आंशिक रूप से विद्यमान है, जब भी किसी के घर बच्चा पैदा होता है, तो पालणा बनाने वाला उस घर में खुशी से पालणा बना कर देता है और बदले में इनाामात के रूप में चंद शेर अनाज लेता है। मां की मनोभावना जो ताऊ, दादा, ताई आदि द्वारा बच्चों के लिए पालणा बनवाने की इच्छा जाहिर करती है, क्योंकि हरियाणवीं लोकजीवन में यह परम्परा है कि घर में बच्चा पैदा होने पर पालणा बनाने वाले से पालणा बनाने के लिए कहा जाता है - ऐसे में ताऊ, ताई, दादा, दादी सभी की ओर से पालणा बनवाने के लिए कहा जाता है, क्योंकि सभी पर अपना हक समझते हैं। संयुक्त परिवार की इसी परम्परा को शिशु को सम्बोधित करते हुए इस लोरी के माध्यम से बहुत ही मनोरम ढंग से प्रस्तुत किया गया है -

तेरी दादी झुलावै, तू झूल ललणा,
मेरा छोटा सा झूगै अटल पलणा,
मेरा बाला सा झूगे अटल पलणा,
तेरा दादा घड़ावैं अटल पलणा,
मेरा बाला सा झुगैं अटल पलणा,
तेरा ताऊ घढ़ावै अटल पलणा,
तेरी ताई झुलावैं, तूं झूल ललणा,
मेरा बाला सा झूगै अटल पलणा। [18]

(इस लोरी में इसी तरह चाचा-चाची, मामा-मामी, नाना-नानी, दादा-दादी के नाम लिये जाते हैं।)

दादी एवं नानी अक्सर बच्चों को छत पर ले जाकर जब चांद के दर्शन कराती हैं, तो उनके अन्दर दूध और घी के साथ-साथ अनाज की पैदावार की मनोकामना का संचार चांद के माध्यम से यह लोरी सुनाकर कुछ इस प्रकार से करती हैं-

नये चांद की राम-राम,
दूध्धू दलिया दियो-ए-राम।

हरियाणवीं लोकजीवन में मां अपने पीहर की मान-बढ़ाई करना अपना नैतिक धर्म मानती हैं, इसलिए वह शिशु को सम्बोधित करते हुए मामा द्वारा पीलिये में ढेरों खिलौने लाने की मनोवृत्ति को इस लोरी के माध्यम से कुछ यूं दर्शाती हैं -

सोज्या रे काले तेरे मामे आवेंगे,
गाड़ी भर कै खील खिलौणे ल्यावैंगे,
लाला लाला लोरी दूध भरी कटोरी,
दूध में पताशा लाला करे तमाशा। [19]

हरियाणवीं लोकजीवन में छोटी लोरियों की परम्परा ज्यादा देखने को मिलती है, वैसे भी लोरी ज्यादा बड़ा नहीं होती। इसके विषय में लोरी की परिभाषा के अंतर्गत भी यह दर्शाया गया है, किंतु कुछ लोरी ऐसी होती हैं, जो संगीतात्मक दृष्टि से अत्यंत उपयोगी होती है। नीचे दी गई यह लोरी इसी तरह का एक अनूठा उदाहरण है, जिसमें गेयात्मकता एवं संगीतात्मकता की विशेषता देखने को मिलती है। इस लोरी के माध्यम से शिशु को दादी, दादा, बूआ तथा पिता के सम्बन्धों की गहराई को कुछ इस प्रकार दर्शाया गया है कि जिससे हरियाणवीं लोकसंस्कृति जीवंत हो उठती है, क्योंकि दादी अपने पोते के जिस भाव से लाड़-लड़ाती है, उससे उसकी अंतरात्मा का दीप प्रज्वलित हो उठता है। इसी प्रकार दादी जी के कुल का दीप भी अलोकमय हो उठता है। बूआ

नेग अनुसार अपने भतीजे के लिए झूगला एवं टोपी लेकर आती है। इसके अतिरिक्त शिशु का पिता जो प्रदेश में रह-रहकर सजग प्रहरी के रूप में भारतमाता रक्षा में जुटा हुआ है कि भावनाओं को भी संजोने का प्रयास किया गया है। संगीतात्मक दृष्टि से हरियाणवीं लोरी का यह उत्कृष्ट नमुना कहा जा सकता है -

मेरे सोज्या मुन्ना रे....
मेरे सोज्या राजा रे.....
सोज्या सोज्या रे....

मेरे सोज्या राजा रे, सोज्या मुन्ना रे सोज्या सोज्या ऊ ऊ ऊ ऊ.....

तेरी दादी हंसैं रे,
दिवा सा चस्सै रै,
तेरे लाड लडावै रे,
तन्नैं गोद खिलावै रे,

मेरे सोज्या राजा रे, सोज्या मुन्ना रे सोज्या सोज्या ऊ ऊ ऊ ऊ....

तेरा दादा हंसैं रे,
दिवा सा चस्सै रै,
औ लाड लडावै रे,
तन्नैं गोद खिलावै रे,

मेरे सोज्या राजा रे, सोज्या मुन्ना रे सोज्या सोज्या ऊ ऊ ऊ ऊ....

तेरी दादी हंसैं रे,
तेरी बुआ आवैगी,
झुगला टोपी ल्यावैगी
तेरे लाड लडावैगी,
तन्नै गोद खिलावैगी,

मेरे सोज्या राजा रे, सोज्या मुन्ना रे सोज्या सोज्या ऊ ऊ ऊ ऊ....

तेरा बाब्बू हंसैं रे,
प्रदेशां बसे रे,
तन्नैं गोद खिलावै रे,

मेरे सोज्या राजा रे, सोज्या मुन्ना रे सोज्या सोज्या ऊ ऊ ऊ ऊ....। [2०]

शिशु के पारिवारिक सदस्य उसके रूप की प्रशंसा करते नहीं अघाते। शिशु के सम्मुख सोना-चांदी भी आभाहीन है। इस लोरी में मां के इसी भाव को प्रकट किया गया है -

मेरा भाई कितणे का,
मण चांदी मण सोने का,
सोने चांदी का क्या करिये।
भाई देख्या मण भरिये। [21]

हरियाणवीं लोकजीवन में अनेक लोकविश्वास एवं मान्यताएं प्रचलित हैं, जो हरियाणवीं लोकसंस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। इन लोकविश्वासों के बिना हरियाणवीं लोकजीवन की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती। नीचे दी गई लोरी में देखिए शिशु का गुणगान कर उसके लिए भावी मनोकामनाओं के माध्यम से दूध-मलाई मिलने की चेष्ठा कैसे की जाती है, ऐसा कहा जाता है कि जो बुरी चीज़ है, वो कव्वें को मिल जायें, क्योंकि देहात में कव्वें को अशुभ माना जाता है, जबकि भाई के लिए दूध-मलाई की कामना की जाती है। इसी के साथ शिशु को नहलाते समय खेल खल खोटा, तेरा मामा मोटा का लोरीनुमा गीत भी सुनाया जाता है। मुख्यत: यह लोरी नहलाते समय शिशु को केन्द्रित करने हेतु गाई जाती है -

छी छी छी छी कव्वा खाए,
दूध मलाई भैया खाए।
लाला की मां पानी जाए,
लाला दूध मलाई खाए।
खल खल खोटा,
तेरा मामा मोटा।
खल खल खोटा,
तेरा मामा मोटा।
नहा ले भाई,
तेरा चोटा मोटा। [21]

स्नान के बाद शिशु को वस्त्र पहनाने के लिए माता शिशु की चिरौरी करती है। पीहर से मामा द्वारा पीलिये में लाने वाले सामान के एहसास को वह कभी नहीं भूलती। यही कारण है कि वह अपने शिशु को हरी ज़री की टोपी पहनने का भी प्रलोभन देती हुई कहती है -

मेरे रे होलरिया तेरा मामा आवैगा,
तेरा मामा आवैगा, ज़री की टोपी लावैगा।
कुरता टोपी लावैगा रंगीला पालणा लावैगा।
रंगीला पालणा लावैगा डोरी खींच झुलावैगा।
मेरे रे होलरिया तेरा मामा आवैगा। [23]

शिशु की भाषा का विकास जटिल प्रक्रिया है। हजारों बार एक ध्वनि को सुनने पर वह सार्थक शब्द के रूप में कुछ-कुछ स्पष्ट होने लगती है। शिशु के साथ 'हूं' 'हां' करके बात करना हुंकारा कहलाता है। अनेकों लोरियां ऐसी देखने को मिलती है, जिनमें हुंकार की अभिव्यक्ति प्रदान की गई है। जैसे -

भाई रे,
बात करले,
हुंकारे भरले।
बात करैगा,
बतौरा बणैगा।
मेरा भाई बोलैगा,
हूं हूं करके बोलैगा।
चंदा सा मुंह खोलैगा,
मेरा भाई बोलैगा।
बोगो भाई बोगो,
चंदा सा मुंह खोगो।
ये बोल्या भाई ये बोल्या,
लो बटुआ सा मुंह खोल्या। 24

शिशु को सुलाना सरल कार्य नहीं है, उसे अनेक प्रकार के प्रलोभन देकर थपथपाया जाता है और निद्रा देवी की लोरियां दी जाती हैं। कभी-कभी शिशु को डराया भी जाता है। आत्मा शैली द्वारा निदियां रानी को शिशु को सुलाने के लिए बुलाया जाता है, जिसकी अभिव्यक्ति इस लोरी में सहज रूप से देखने को मिलती है -

निंदिया रानी आ जा,
मुन्ने को सुला जा।
निंदिया रानी आ जा,
मुन्ने को सुला जा।
मुन्ना अब सो जाएगा,
परीलोक को जाएगा। [25]

शिशु को सुलाने हेतु अनेक तरह के नाटक किये जाते हैं, उसे डराया जाता है। कोको एवं लूगू के माध्यम से उसको अनेक तरह के डराने के संकेत दिये जाते हैं। उसके कान-काटने की बात की जाती हैं। वास्तव में बगो के ऊपर मनोवैज्ञानिक दबाव बनाकर उसे सुलाने का प्रयास किया जाता है, जिसका चित्रण नीचे दी गई लोरी में भी मिलता है-

कोको कोको आजा,
भाई को डरा जा।

कोको कोको आजा,
भाई नै सुला जा।
भाई को सुलाएंगे,
कोको को भगाएंगे।

शिशु स्वभावत: विश्वासी होते हैं। थोड़ा-सा प्रलोभन देकर उनको बहकाया जा सकता है। उन्हें बहकाने, फुसलाने से सम्बन्धित कई लोरियां गाई जाती हैं। शिशु को लोरियों के माध्यम से पशु-पक्षियों के बारे में ज्ञान प्रदान किया जाता है, क्योंकि हरियाणवीं लोकजीवन में पशु-पक्षियों का विशेष महत्व है। अनेक लोक-कथाओं एवं लोकगीतों में भी पक्षियों के विषय में विशेष जानकारियां उपलब्ध होती हैं। यहां पर मां चिडिय़ा रानी को बुलाती है और अपनी मनोभावनाओं को कुछ इस प्रकार अभिव्यक्त करती है -

आ जा चिडिय़ा,
आ जा चिडिय़ा।
भाई को दे जा,
खांड की पुडिया।
आ जा चिडिय़ा।

ग्रामीण जीवन में विषय-वस्तुओं को बेचने का एक अनूठा तरीका होता है। विषय-वस्तु बेचना वाला व्यक्ति लोकजीवन की मनोभावना के अनुसार अपनी अभिव्यक्तियां प्रदान करता है। ये अभिव्यक्तियां इतनी गहन एवं रोचक होती हैं कि वे सहज ही सामान्यजन का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेती हैं। इसी परम्परा का निर्वहन करते हुए यह लोरी देखिए, जिसमें ऊंट, घोड़ा, गाय, बछड़ा आदि के लेने की बात कही गई है। यह सब कुछ शिशु को झुलाते समय कहा जाता है। शिशुओं को पालने के अतिरिक्त सम्बन्धियों के हाथ-पैरों पर बैठकर झूलना अच्छा लगता है। झूलते समय लोरी की ध्वनि झूलने के आनन्द को और अधिक बढ़ा देती है।

कोई छगा लो,
कोई छाप लो।
कोई ऊंट लो,
कोई घोड़ा लो।
कोई गाय लो,
कोई बछड़ा लो।
झूं झूं झोटे,
मामा मोटें।
झूं झूं झोटे,
मामा मोटे। [26]

हरियाणवीं लोकजीवन में लोकविश्वासों का महत्वपूर्ण योगदान है। शिशु को नज़र से बचाने के लिए अनेक उपाय किये जाते हैं। शिशु के ऊपर से मिर्च वारी जाती है, फटकरी कर चूल्हे में डाली जाती है, जिससे नज़र लगने वाले व्यक्ति का चेहरा उभर कर सामने आ जाता है। इसके अतिरिक्त सरसों के तेल की लौ को चौखट के सहारे लगाकर जलाया जाता है, जिससे शिशु को लगी नज़र टूट कर गिर जाती है। इतना ही नहीं, नन्हें शिशु को नज़र से बचाने के लिए नज़रिए भी पहनाएं जाते हैं -

कौन लुगाई आग को आई,
लाला को नज़र लगाई।
नून की वारूं, राई भी वारूं,
लाला की नज़र उतारूं।
बुआ लाई है नज़रिया,
मेरा लाला पहनैगा।
मेरा लाला पहनैगा,
अंगन में हंसता डोलैगा।
सिर पै आई अला बला नै,
हंसते हंसते झेलैगा। [27]

खान-पान की दृष्टि से हरियाणवीं लोकजीवन सदा से ही समृद्ध रहा है। जब भी खाने की बात आती है, तो दूध-मलाई और घी-शक्कर का जिक्र अवश्य आता है। ऐसे में इन सब की तमन्ना करते हुए मां राम से अपने बच्चों के लिए घी शक्कर एवं दूध मलाई की कामना करती है -

राम-राम रोटी दे,
रोटी दे तै मोटी दे।
मोटी दे तै दो दे,
दो दे तै घी मैं डब्बो दे।
घी मैं डब्बो दे तैं,
ऊपर शक्कर बो दे।
म्हारै मोन्नूं के मुंह मैं पौ दे,
राम-राम रोटी दे.....। [28]

हरियाणवीं लोरी एक ऐसी विधा है, जिसमें गोतेे लगाने के पश्चात् हर पाठक मन का शिशु मन उजागर हो उठता है। इसके साथ-साथ बालजीवन की वह झांकी हमारे सामने हिलोरें लेने लगती हैं, जिसको हमने पल-पल जिया है। हरियाणवीं लोरी हमारी किसानी संस्कृति एवं लोकजीवन का आईना हैं। इस प्रदेश की सम्पूर्ण सभ्यता एवं संस्कृति का लोरियों के साथ गहरा सम्बन्ध है। लारियों के माध्यम से हरियाणवीं लोकसांस्कृतिक जीवन की पहचान तो होती ही है, इसके साथ-साथ यहां के खान-पान, रहन-सहन, लोकमान्यताओं, लोकविश्वासों तथा लोकजीवन की परम्पराओं से जुड़ा कोई भी पहलू अछूता नहीं है। हरियाणवीं लोरियां लोकसाहित्य की प्रकिरण विधा का महत्वपूर्ण अंग है। इनके माध्यम से जहां एक ओर मां की वात्सल्यता का रस टपकता है, वहीं पर दूसरी ओर इनके माध्यम से शिशुओं में लोकपारम्परिक संस्कारों का संचार किया जाता है। लोरियां केवल मां द्वारा ही नहीं गाई जाती, अपितु शिशु के सभी रिश्ते एवं नातेदारों के द्वारा गाई एवं गुनगुनाई जाती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के लिए अलग-अलग लोरियां होती है, किंतु हरियाणवीं लोकजीवन में महिलाओं से सम्बन्धित लोरियों की बहुलता देखने को मिलती है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी लोरियां जहां शिशुओं के भावी-भविष्य का निर्माण करने में सहायक होती हैं, वहीं पर पीढ़ी-दर-पीढ़ी लोरी परम्परा को संवाहक के रूप में निर्णायक भूमिका अदा करती है। हरियाणवीं लोकजीवन में बिखरे हुए इन अमूल्य मोतियों को संजोए जाने की आवश्यकता है, ताकि हरियाणवीं लोकसंस्कृति की संवाहिका इन लोरियों के माध्यम से प्रदेश की लोकसांस्कृतिक परम्परा को बचाया जा सके।

संदर्भ:

1. डॉ. जय नारायण कौशिक, हरियाणवी-हिंदी कोश, हरियाणा साहित्य अकादमी प्रकाशन 1985, पृष्ठ संख्या 772
2. कालिका प्रसाद, वृहद हिन्दी कोश ज्ञानमंडल लिमिटेड वाराणसी, सम्वत् 2020, पृष्ठ संख्या 1०००
3. करुणापति त्रिपाठी, लघु हिन्दी शब्द सागर, नागरी प्रचारणी सभा, कांशी सं. 2021
4. बिमला कौशिक, ला-ला लोरी आशा प्रकाशन, करोल बाग, नई दिल्ली, सन् 1992
5. महासिंह पूनिया, हरियाणवीं संस्कृति का बदलता स्वरूप आलेख, पत्रिका म्हारा हरियाणा, हरियाणा साहित्य अकादमी, अंक, नवम्बर 2008
6. ओमप्रकार सिंहल, हिन्दी बाल-साहित्य परम्परा और प्रयोग, अनुराग प्रकाशन, नई दिल्ली सन् 1992
7. हरियाणवीं लोरियों की लोकसांस्कृतिक विशेषताएं: एक अध्ययन: जनरल ऑफ पिपल एण्ड सोसाइटी ऑफ हरियाणा, महर्षि दयानन्द

विश्वविद्यालय, रोहतक, वाल्यूम - 1, नं. -1, अप्रैल, सन् 2०1०

8. श्रीमती छन्नो देवी, साक्षात्कार- निवासी गांव डिडवाड़ी, जिला पानीपत- जून 2०18